# अभिज्ञानशाकुन्तलम् विषयक वक्तव्य- 02

## अभिज्ञानशाकुन्तल विषयक श्लोक-चतुष्ट्य

(ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय के संस्कृत ऑनर्स द्वितीय वर्षीय छात्र छात्राओं के-चतुर्थ पत्र की प्रथम अन्विति के लिए। महाकवि कालिदास के प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक के प्रसिद्ध चार श्लोकों के बारे में विद्यार्थियों के अध्ययनार्थ पाठ्य सामग्री संकलन)

पाठ्य संकलनकर्त्ता : डॉ. विकास सिंह, संस्कृत विभागाध्यक्ष, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार)

अभिज्ञानशाकुन्तलम् संस्कृत साहित्य का ही नहीं अपितु विश्व साहित्य का सर्वोत्कृष्ट नाटक माना जाता है। इसके सात अंकों में दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रेम, वियोग और पुनर्मिलन की कथा वर्णित है। इस नाटक के विषय में विद्वानों की प्रसिद्ध सूक्ति है-

**काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।**

**तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोक चतुष्टयं॥**

प्रथम श्लोक-

**कश्यप: यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया**

**कण्ठ: स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।**

**वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यकस:**

**पीड्यन्ते गृहिण: कथं न तनयाविश्लेषदु:खैर्नवै:॥ (४/६)**

अर्थात्- आज शकुन्तला जायेगी, इस कारण मेरा हृदय व्याकुलता से व्याप्त है, आँसुओं को बहने से रोकने के कारण गला रुँध गया है, तथा चिन्ता के कारण दृष्टि जड़ सी हो गयी है। वन में रहने वाले मेरी स्नेहवश जब ऐसी विकलता है। तो गृहस्थी लोग नये-नये पुत्री के वियोग के दु:खों द्वारा भला कैसे पीड़ित नहीं होते होंगे।

द्वितीय श्लोक-

**पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या**

**नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।**

**आद्ये व: कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सव:**

**सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥(४/९)**

अर्थात्- जो (शकुन्तला) तुम्हें जल पिलाये बिना पहले जल पीने का प्रयास नहीं करती थी , अलंकरणप्रिय होते हुए भी जो स्नेहवश आपके नूतन पत्तों को नहीं तोड़ती थी। आप सब की प्रथम पुष्पोत्पत्ति के समय जिसे महोत्सव जैसा आनन्द होता था। वह यह शकुन्तला पति के घर जा रही है। आप सब अनुज्ञा प्रदान कीजिए।

तृतीय श्लोक:

**अस्मान्साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चै: कुलं चात्मन-**

**स्त्वय्यस्या: कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।**

**सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया**

**भाग्यायत्तमत: परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभि:॥(४/१७)**

अर्थात्- संयम ही है धन जिनका ऐसे हम लोगों का तथा अपने उच्चकुल का एवं किसी प्रकार भी बन्धुओं के सहयोग के बिना ही की गई, तुम्हारे प्रति इसकी उस प्रेमवृत्ति का भली प्रकार विचार करके यह शकुन्तला अन्य पतियों में तुम्हारे द्वारा समान आदरपूर्वक देखने योग्य है। इससे अधिक भाग्य के अधीन होता है। अत: उस विषय में वधू के बन्धुओं को कुछ भी नहीं कहना चाहिए।

चतुर्थ श्लोक:

**शुश्रूषस्व गुरुन्कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने**

**भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गम:।**

**भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी**

**यान्त्येवं गृहणीपदं युवतयो वामा: कुलस्याधय:॥ (४/१८)**

अर्थात्- गुरुओं की सेवा करना, सपत्नीयों के साथ प्रिय सखी जैसा व्यवहार करना, अपमानित होने पर भी रोष के कारण पति के प्रतिकूल आचरण नहीं करना, सेवकों के प्रति अत्यधिक उदार रहना, अपने भाग्य पर अहंकार नहीं करना। इस प्रकार आचरण करने वाली स्त्रियाँ सुगृहिणी के सम्मानजनक पद को प्राप्त करती है तथा विपरीत आचरण करने वाली स्त्रियाँ कुल के लिये अभिशाप होती हैं।